देव गति कारण–निवारण

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

पर्याप्ति और प्राण दो ऐसी शक्तियां हैं, जो जीवन के नियामक हैं। प्राणी का जीवन प्राणशक्ति पर आधारित है। प्राणशक्तियां दस हैं– स्पर्शन इन्द्रिय प्राण, रसन इन्द्रिय प्राण, घ्राण इन्द्रिय प्राण, चक्षु इन्द्रिय प्राण, श्रोत्र इन्द्रिय प्राण, मन बल, वचन बल, काय बल, श्वासोच्छ्वास प्राण, आयुष्य प्राण। ये दसों प्राण छः पर्याप्तियों में समाहित हैं– इन्द्रिय पर्याप्ति, श्वासोच्छ्वास प्रर्याप्ति, शरीर पर्याप्ति, भाषा पर्याप्ति, मनः पर्याप्ति, आहार पर्याप्ति। जीवन को संचालित करने के लिए पर्याप्ति और प्राण बहुत आवश्यक है। मनुष्य की गतियों में देवगति उच्चतम श्रेणी है। लेकिन जो व्यक्ति मैं और मेरा में डूबा रहता है। वह स्वार्थ में ही जीता है। जो व्यक्ति मन, वचन और काया से यह प्रार्थना करता है कि यदि मेरे द्वारा किसी प्राणी को कुछ पीड़ा हुई हो तो मैं शुद्ध अन्तःकरण से क्षमाप्रार्थी हूं। क्षमा लेना और देना संत स्वभाव का मनुष्य ही कर सकता है। जो परमार्थ के लिए जीवन व्यतीत करता है, है, जो पंचमहावर्ती है, जो कंचनकामिनी का त्यागी है, ऐसा व्यक्ति स्वयं तरता है एवं दूसरों को भी तार देता है।

जीवन में पुण्यार्जन करने का प्रयास करना चाहिए। पुण्य का परिणाम पुण्य और पाप का परिणाम पाप होता है। यही कुदरत का कानून है। न्यायाधीश कभी गलत या सही फैसला कर सकता है लेकिन कुदरत का कानून कभी गलत नहीं होता। वहां पर अच्छे काम का परिणाम अच्छा और बुरे कार्य का परिणाम बुरा ही होता है। जो अच्छा कार्य करता है वह देवगति को प्राप्त करता है और जो गलत कार्य करता है वह नरकगामी होता है। साधु, संन्यासी, साधक शुद्ध जीवन जीते हैं। अपने अच्छे कार्यों के कारण उन्हें देवगति प्राप्त होती है। ज्ञानी पुरुष सत्कर्म करता है, वह अपने जीवन का निर्माण करता है तथा दूसरे के विषय में अच्छी सोच रखता है। मनुष्य को स्वभाव में रमण करना चाहिए। ज्ञाता दृष्टा भाव से जीवन जीना चाहिए। आत्मा अनन्तज्ञान दर्शन का भण्डार है। आत्मा और शरीर दो भिन्न–भिन्न तत्व हैं। जिसे इस भेद विज्ञान का ज्ञान है वह देव गति को प्राप्त करता है। देवगति उत्तम गति है।

मोक्ष के चार मार्ग है– ज्ञान, दर्शन चारित्र और तप जीवन के मोक्ष मार्ग है। शरीर जड़ है और आत्मा चेतन है। आत्मा के कारण शरीर चेतनवत् प्रतीत होता है। शरीर नाशवान है यह गलन–मिलन धर्मा है। आत्मा त्रैकालिक है। यह आत्मज्ञान सम्यक् ज्ञान है जिसको जीवन में धारण कर आचरण में उतारना चाहिए। तप जीवन का श्रृंगार है, तप से बुराइयों का शोधन होता है। मानव जीवन का श्रृंगार आभूषण नहीं है। आभूषण केवल बाहरी चमक–दमक है। यह बाहरी श्रृंगार है। जीवन को उत्कर्ष पर पहुंचाने वाला आभ्यन्तर श्रृंगार है। सादा जीवन उच्च विचार मानव जीवन का श्रृंगार यह कहावत तप को ही ध्यान में रखकर कही गयी है। तपस्या को साधना का अपरिहार्य अंग माना गया है। तपस्या का अर्थ काय–क्लेश या उपवास ही नहीं है, बल्कि स्वाध्याय, ध्यान, विनय आदि सब तपस्या के विभाग हैं।

तपस्या मोक्ष का मार्ग है, उससे तपस्वी मोक्ष की ओर गति करता है। प्रत्येक संसारी जीव प्रतिक्षण कुछ न कुछ प्रवृत्ति सदैव करता है। जब उसकी प्रवृत्ति रुक जाती है तब वह मुक्त हो जाता है। जहां प्रवृत्ति है, वहां कर्म पुद्गलों का आकर्षण और निर्जरण होता है। प्रवृत्ति दो प्रकार की होती है– शुभ और अशुभ। शुभ प्रवृत्ति से अशुभ कर्मों का निर्जरण और शुभकर्म का बन्ध होता है। अशुभ प्रवृत्ति से अशुभ कर्मों का बन्ध होता है। आत्मा ज्ञान से जीवादि भावों को जानता है, दर्शन से उसका श्रद्धान करता है, चारित्र से कर्मास्रव का निरोध करता है और तप से विशुद्ध होता है। सर्व दुःखों से मुक्त होने के लिए तपस्वी संयम और तप से पूर्वकर्मों का क्षय करके मुक्ति प्राप्त करते हैं।

तप कर्मों की निर्जरा और आत्मविशुद्धि का सर्वोत्कृष्ट साधन है। जो ज्ञानावरणादि आठ प्रकार की कर्म ग्रन्थि को तपाता है, जलाता है, नाश करता है, वह तप है। वासना या इच्छा का निरोध करना भी तप कहलाता है। बाह्य या आभ्यन्तर जितने भी तप हैं उनका आचरण इह लौकिक तथा पारलौकिक नामना, कामना या वासना से रहित होकर केवल निर्जरा की दृष्टि से करना ही धर्म है। जैसे अग्नि हवा के द्वारा तृण और काष्ठादि को जलाती है वैसे ही ज्ञानरूपी हवा से युक्त शील, समाधि और संयम से प्रज्वलित तप रूपी अग्नि संसार रूपी बीज को जलाती है। तपस्या को आत्मशुद्धि का साधन और कर्मों की निर्जरा का हेतु बताया गया है।

मुक्ति व शान्ति प्राप्त करने में तप की महती भूमिका होती है। तप के मुख्य दो भेद हैं– बाह्य और आभ्यन्तर। बाह्य तप अध्ययन आदि कारणों से बाह्य तप कहलाता है। इसमें बाहरी द्रव्यों की अपेक्षा होती है, अशन, पान आदि द्रव्यों का त्याग होता है। अनशन, अवमौदर्य, भिक्षाचर्या या वृत्ति संक्षेप, रस–परित्याग, काय क्लेश, प्रतिसंलीनता अथवा विविक्त शयनासन बाह्य तप हैं। आभ्यन्तर तप प्रधान है। आभ्यन्तर तप शुभ और शुद्ध परिणामों से युक्त होता है। इसके बिना अकेला बाह्यतप पूर्ण कर्म निर्जरा करने में असमर्थ है। आभ्यन्तर तप के छह भेद हैं– प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, ध्यान और उत्सर्ग।